No. 9

गौरव गाथा

PRICE. Rs. 3.00

मुंशी प्रेमचंद

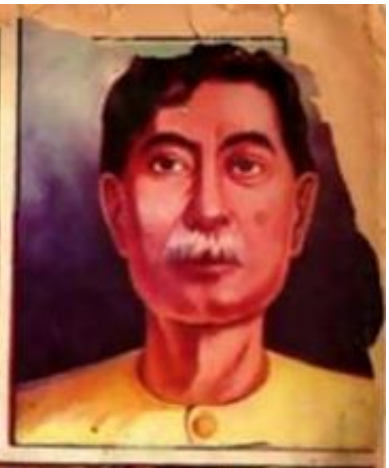

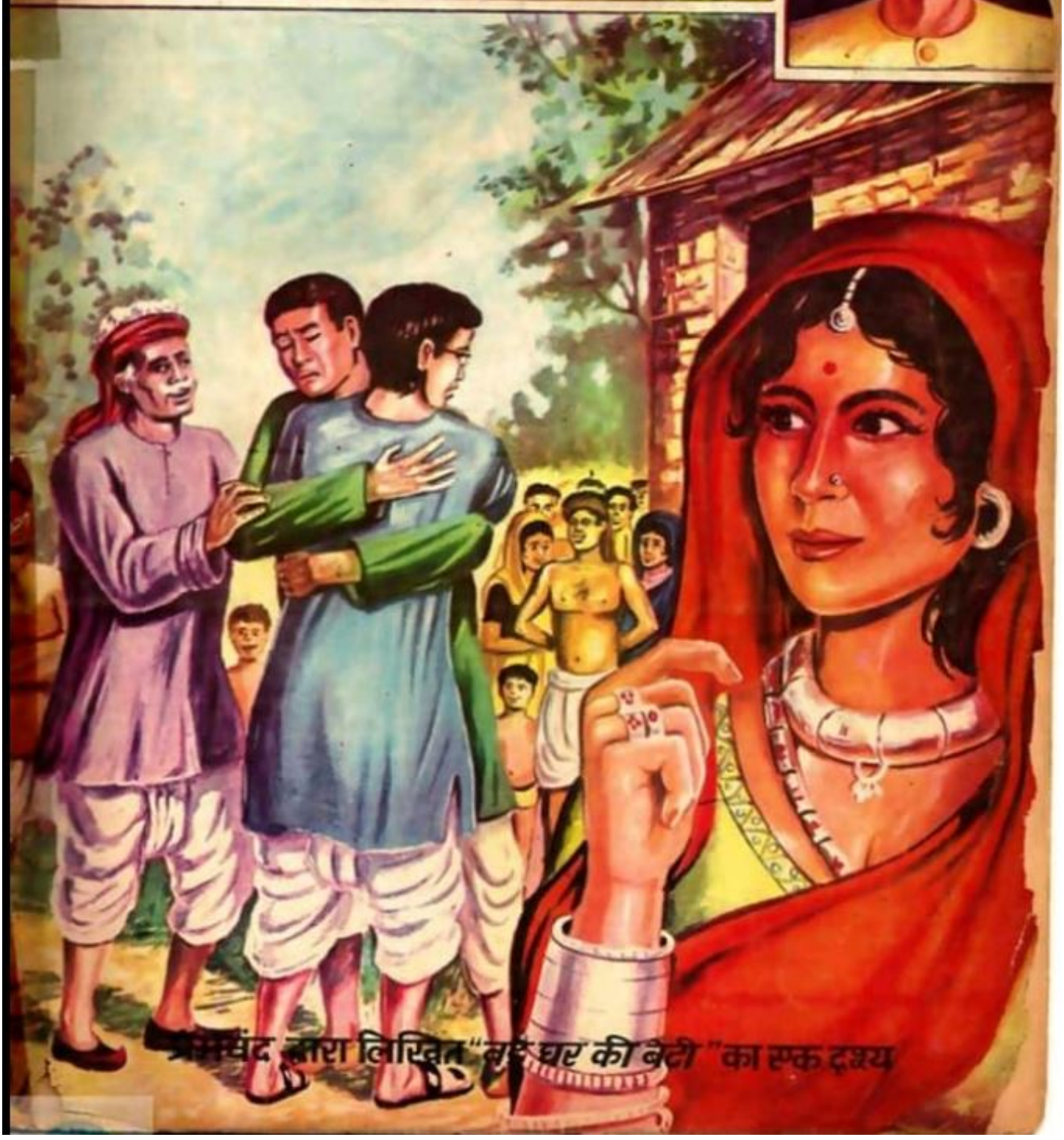

प्रेमचंद द्वारा लिखित "बड़े घर की बेटी" का एक दृश्य

मुंशी प्रेमचंद
(1880—1936)

भारत के महान् लेखक जिन्होंने अपनी लेखनी का उपयोग पीड़ितों और शोषितों की आवाज़ बुलंद करने के लिए किया। उनके उपन्यासों और कहानियों में हमें राजा राममोहन राय, विवेकानंद, तिलक, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरु, भगत सिंह आदि समाज-सुधारकों और स्वतंत्रता-सेनानियों की आवाज़ों की गूँज सुनाई देती है। उनकी कुछ साहित्यिक रचनाएँ दुनिया की सर्वश्रेष्ठ कृतियों में गिनी जाती हैं।

उनके पिता अजायब लाल बनारस ज़िले के लमही गाँव में डाक-मुंशी थे। यों उनके साधन बहुत सीमित थे पर दिल बहुत बड़ा था।

जब तक मैं ज़िंदा हूँ तुम्हें सिर छिपाने की जगह की कमी नहीं होगी। आख़िर तुम्हारे दिवंगत पति मेरे भतीजे थे – उनमें मेरा ख़ून था।

उनके एक भाई कम उम्र में चल बसे थे। उनके परिवार का भरण-पोषण भी वे ही करते थे। अपने स्वर्गीय भाई की बेटी का ब्याह भी उन्होंने किया।

लड़की का भाग्य अच्छा है। उसके चाचा उसके लिए एक आदर्श पिता रहे हैं।

किंतु अजायब इस दृष्टि से बदकिस्मत थे कि उनके अपने बच्चे नहीं रहे। दो बच्चे – दोनों लड़कियाँ – पैदा होने के कुछ समय बाद ही चल बसे। जब उनकी पत्नी फिर गर्भवती हुई तो पड़ोसियों ने उन्हें सलाह दी—

सुनो आनंदी, इस बार तुम मैके मत जाओ। लगता है वह घर तुम्हारे लिए शुभ नहीं है।

आनंदी अपने पति के घर ही बनी रही। फिर उनके तीसरी लड़की हुई और सचमुच वह ज़िंदा रही। उसका नाम रखा गया सुभगी।

सात साल बाद 31 जुलाई, 1880 को उनके घर एक पुत्ररत्न ने जन्म लिया। यही बालक आगे चलकर प्रेमचंद कहलाया। यों इस बच्चे का नाम रखा गया था धनपतराय। उसके एक चाचा प्यार से उसे नवाबराय के नाम से बुलाते थे।
धीरे-धीरे प्रेमचंद बड़े हुए और ज्यों-ज्यों बड़े होते गये एक सक्रिय नटखट बालक के रूप में ढलते गये।
माँ!
देखो तो तुम्हारे लाड़ले ने क्या किया है!
तुमसे किसने कहा था कि उस्तरे से खेलो?
माँ! मैं तो उसकी दाढ़ी बना रहा था।
ढेले मार कर पेड़ों पर से आम गिराने में भी प्रेमचंद माहिर थे।

कज़ाकी नाम के डाकिये से उनका बहुत गहरा लगाव था।

कज़ा की चाचा! कल जो कहानी अधूरी छोड़ दी थी उसे पूरी करो ना! बताओ राज कुमार का फिर क्या हुआ?

राजकुमार ने राजकुमारी से ब्याह कर लिया और अपने विशाल राजमहल में सुख से रहने लगा। आज मैं तुम्हें एक और कहानी सुनाता हूँ...

प्रेमचंद की आरंभिक शिक्षा पड़ोस के एक गाँव लालपुर में हुई। उनके उस्ताद एक मौलवी थे जिन्होंने उन्हें उर्दू-फ़ारसी पढ़ाई। प्रेमचंद के साथ उनके चचेरे भाई हलधर भी पढ़ते थे।

दोनों लड़के अकसर स्कूल से गोल हो जाते और कहीं खड़े होकर भालू या बंदर का तमाशा देखते हुए अपना वक़्त पूरा कर लेते।

...या फिर वे सबसे नज़दीक के रेलवे स्टेशन पर चले जाते और आती-जाती रेलगाड़ियों को देखते रहते।

मौलवी साहब स्कूल से नागा करने के लिए उन्हें डाँटते-डपटते पर वे लोग मौलवी साहब को खुश करने की तरकीब जानते थे।

तुम लोग पूरे दो दिन के बाद शकल दिखाने आये हो! मैं मार-मार कर तुम्हारा कचूमर निकाल दूँगा।

जनाब, हम आपके लिए एकदम ताज़ा गन्ने लेकर आये हैं। बड़े रसदार हैं। आप चखेंगे नहीं, जनाब।

मौलवी साहब ने कई पिंजड़ों में पंछी पाल रखे थे। कभी-कभी ये दोनों उनके लिए कीड़े-मकोड़े पकड़ लाते थे।

अरे लड़को! तुम इतनी बड़ी-बड़ी टिड्डियाँ कहाँ से पकड़ लाते हो? देखो मेरे पंछी कितने मज़े से उन्हें चट किये जा रहे हैं।

जब वे करीब आठ वर्ष के थे तो उनकी माँ का स्वर्गवास हो गया। चचेरा भाई हलधर गाँव दौड़कर अपने अन्य रिश्तेदारों के यहाँ चला गया। अब प्रेमचंद बहुत अकेलापन महसूस करने लगे।

कुछ महीने बाद उनके पिता का तबादला जिमनिया नाम की जगह के लिए हो गया। प्रेमचंद भी अपने पिता के पास चले गये। माँ का नियंत्रण रहा नहीं था, अतः वे कुछ बुरी आदतें सीखने लगे।

उधर, रिश्तेदारों ने उनके पिता के ऊपर दूसरी शादी के लिए दबाव डालना शुरू कर दिया।

तुम्हें फिर शादी कर लेनी चाहिए- अपने लिए नहीं तो लड़के की खातिर। उस पर ठीक से ध्यान नहीं दिया जा रहा।

जल्दी ही प्रेमचंद की सौतेली माँ घर में आईं...

ये तुम्हारी नई माँ हैं, धनपत! ये तुम्हें उतना ही प्यार करेंगी जितना तुम्हारी अपनी माँ करती थीं।

सच, पिताजी?

सौतेली माँ अपने साथ अपना एक छोटा भाई भी लाई थी- विजय बहादुर। उसमें और प्रेमचंद में अच्छी दोस्ती हो गई। सौतेली माँ खुले तौर पर अपने भाई की तरफदारी करती थी। उन्होंने प्रेमचंद के साथ दुर्व्यवहार करना भी शुरू कर दिया।

एक बार -

तुम पड़ौसियों से शिकायत करते हो कि मैं तुम्हारे साथ अच्छा सलूक नहीं करती! तुम कहते हो मैं तुम्हें ठीक से खाना नहीं देती!

चाची, मैंने तो कभी किसी से शिकायत नहीं की, किसी ने आपसे झूठ कहा है।

अजायब लाल जानते थे कि उनके बेटे के साथ विमाता का सलूक अच्छा नहीं... पर वे लाचार थे।

** प्रेमचंद अपनी सौतेली माँ को चाची कहते थे।

एक साल बाद अजायब लाल का तबादला गोरखपुर के लिए हो गया। वहाँ प्रेमचंद का दाखिला मिशन हाई स्कूल में करा दिया गया। उनकी सौतेली माँ पूरे महीने की पढ़ाई की फीस और जेब खर्च दोनों के लिए मिलाकर कुल एक रुपया देती थीं।

चाची दिन-ब-दिन कंजूस होती जा रही हैं। वे ओछी भी हैं और फूहड़ भी। मेरी माँ तो एकदम देवी थी!

प्रेमचंद का जीवन यों तो बड़ा कठिन था मगर फिर भी वे खूब खुश रहते थे। अकसर वे अपने सहपाठियों के साथ खेलों में शामिल होते।

वो काटा

हर साल शरत ऋतु में रामलीला का अवसर आता तो वह उनके लिए बहुत बड़े मनोरंजन के दिन होते। जो लड़के राम और लक्ष्मण बनते, वे उनकी नज़रों में बड़े गुणवीर होते थे।

प्रेमचंद और विजयबहादुर मुशायरों में भी जाया करते थे।

...पर उन्हें सबसे ज़्यादा मज़ा आता था उपन्यास पढ़ने में। उपन्यासों के वे बहुत बड़े पढ़ाकू थे। गोरखपुर में उन्होंने कई मशहूर उर्दू लेखकों की रचनाएँ पढ़ डालीं।

* यह एक इंटरमीडियट कॉलेज था जिसमें हाई स्कूल से नीचे की कक्षाएँ भी शामिल होती थीं।

प्रेमचंद 15 वर्ष के थे तभी उनका विवाह कर दिया गया। विवाह उनकी सौतेली माँ ने तय किया था।

वे दुल्हन को लेकर अपने गाँव लौटे।

अब मेरी ज़िंदगी की उदासी खत्म हो जायेगी। एक नये जीवन की शुरुआत होगी – सुखी जीवन की

नई बहू उम्र में प्रेमचंद से बड़ी तो थी ही, वह काली, कुरूप और फूहड़ भी थी

हे भगवान!

उनके पिता उनकी सौतेली माँ से बेहद नाराज़ हुए।

वह बेहद कुरूप और भद्दी है। वह कतई मेरे बेटे के लायक नहीं! तुमने उसके साथ बहुत बेइंसाफी की है।

प्रेमचंद के इस दुर्भाग्यपूर्ण विवाह के बाद ही उनके पिता का निधन हो गया।

अब मुझे अपना, अपनी सौतेली माँ का और दो सौतेले भाइयों का सबका भरण पोषण करना होगा।

पिता के देहान्त होजाने की वजह से प्रेमचंद अपनी मैट्रिकुलेशन परीक्षा में भी नहीं बैठ सके। उन्होंने यह परीक्षा एक साल बाद (1918) में पास की। उन्हें द्वितीय श्रेणी मिली।

द्वितीय श्रेणी का मतलब है कि क्वीन्स कालेज में मुझे वज़ीफ़ा नहीं मिलेगा।

परंतु अपनी पढ़ाई आगे जारी रखने का उनका बड़ा मन था। उन्होंने एक नये खुले कालेज - हिंदू कालेज - में दाखिला ले लिया और प्रिंसिपल मि. रिचर्डसन* से भेंट की।

मेरी पूरी हमदर्दी तुम्हारे साथ है परंतु कॉलेज के नियमों के मुताबिक मैं न तो तुम्हारी फ़ीस में कोई रियायत कर सकता हूँ, न तुम्हें वज़ीफ़ा दे सकता हूँ। यह मदद तो सिर्फ़ प्रथम श्रेणी के छात्र को मिल सकती है। अगर कोई बहुत तगड़ी सिफ़ारिश आये तो तुम्हारे मामले पर विचार किया जा सकता है।

कई दिन की दौड़ धूप के बाद किसी तरह प्रेमचंद ने कॉलेज की प्रबंध-समिति के एक सदस्य से एक सिफ़ारिशी चिट्ठी पा ही ली।

इतने दिन तुम कहाँ रहे?

बीमार था। दिल धड़कने की बीमारी, श्रीमन्।

प्रिंसिपल ने किसी तरह अपनी मुस्कराहट दबा ली। प्रेमचंद से कहा गया कि वे इम्तहान दें। अंग्रेज़ी की परीक्षा में उन्होंने बहुत ही अच्छा पर्चा किया पर गणित में उनका सिलसिला ठीक नहीं जमा - गणित उनको लिए हमेशा होवा रहा था।

अब वापस प्रिंसिपल के पास जाने का कोई फ़ायदा नहीं।

कालेज की सहायता के बिना अपनी पढ़ाई जारी रखना उनके लिए बेहद मुश्किल था। अचानक एक दिन एक वकील ने उनकी समस्या हल कर दी।

मुझे अपने बेटे के लिए एक शिक्षक की ज़रूरत है। मैं तुम्हें पाँच रुपया महीने दूँगा। मेरे घर में अस्तबल के ऊपर एक कोठरी है। तुम चाहो तो उसमें रह सकते हो।

* मि. रिचर्डसन यों तो अंग्रेज़ थे परंतु बहुत भले आदमी थे और उन्होंने अपने आपको बहुत हद तक हिन्दुस्तानी साँचे में ढाल लिया था।

इसी छप्पर-भरे कमरे मे प्रेमचंद ने एक बोरी बिछायी, एक लैंप खरीदा, घर से रसोई के कुछ बर्तन ले आये और जम गये। वे अपने लिए रोजाना एक बार दाल-चावल पकाते थे।
अपना फुर्सत का वक्त वे पुस्तकालय मे उपन्यास पढ़ने मे बिताते। उन्होंने रतननाथ सरशार की अमरकृति 'फसाना-ए-आजाद' पढ़ी। राष्ट्रगीत 'वंदेमातरम्' के रचनाकार बंकिम चंद्र चैटर्जी के उपन्यासों के उर्दू अनुवाद भी उन्होंने पढ़ डाले।
प्रेमचंद की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय थी। वे पाँच रुपये कमाते थे और उसमें से तीन रुपये अपनी सौतेली माँ को भेज देते थे। अकसर खाने-पीने की चीजें खरीदने के लिए भी उनके पास पैसा नही रहता था। एक दिन—
जब तक तुम पिछला हिसाब नहीं चुकाते, मैं तुम्हें कोई भी चीज उधार नही दूंगा।
प्रेमचंद को कई दिन से खाना नसीब नही हुआ था। वे पुरानी किताबों की एक दुकान पर गये।
यह चक्रवर्ती की गणित की कुंजी है। एकदम नई है। इसका आप मुझे क्या देंगे?
एक रुपया।
एक सज्जन दूर से लेन-देन का यह तमाशा देख रहे थे। वे बनारस से तीस मील दूर के एक कस्बे चुनार के एक छोटे-से मिशन स्कूल के प्रधानाध्यापक थे।
बरखुदार तुम आजकल क्या कर रहे हो?
मैंने मैट्रिक किया है और कालेज में पढ़ रहा हूँ।
मुझे अपने स्कूल के लिए एक मैट्रिक-पास मास्टर की जरूरत है। अठारह रुपये महीने तनख्वाह होगी – बोलो, आना चाहोगे?
अठारह रुपये। मैं तो कभी सपने में भी नहीं सोच सकता। मुझे मंजूर है!

चुनार छावनी थी। अच्छी रौनक जगह। अध्यापक के रूप में प्रेमचंद जल्दी ही लोकप्रिय हो गये।

उनकी सौतेली माँ का भाई विजयबहादुर उन्हीं के साथ रहने लगा था। एक बार दोनों लमही गये और चार-पाँच दिन वहाँ रहे। चुनार के लिए रवाना होते वक्त —

गाँव में वे किसी से उधार लेना नहीं चाहते थे। उन्होंने बनारस जाकर अपना गर्म कोट दो रुपये में बेचा। एक ही साल पहले यह कोट उन्होंने बड़ी मुश्किल से सिलवाया था।

परेशानियों के इन सब हालात के बावजूद वे चुनार में खूब खुश थे। एक बार छावनी के अंग्रेज़ फ़ौजियों की टीम और उनकी स्कूल-टीम के बीच एक फ़ुटबाल मैच हुआ।

टीमी लोग मैच हार गये। मैच के बाद स्कूल टीम के एक लड़के को एक टीमी ने ठोकर मारी —

प्रेमचंद भी दर्शकों में बैठे थे। उन्होंने यह देखा तो एक झंडे का डंडा उखाड़कर उस टीमी के कसकर जमा दिया—

हमारे खिलाड़ी को मारने की तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई?

इसके बाद तो दोनों टीमों में खूब डटकर लड़ाई हुई। बहुत सारे दर्शक भी उसमें शामिल हो गये। टीमियों की खूब डटकर पिटाई हुई परंतु अगले दिन—

कल के कांड में तुम्हारा कूद पड़ना स्कूल के अधिकारियों को अच्छा नहीं लगा। आइंदा तुम्हें सावधान रहना चाहिए।

प्रेमचंद प्रकृति से आवेगशील थे। कुछ ही महीने बाद एक मुसलमान-साथी से बेइंसाफी करने पर उन्होंने स्कूल- अधिकारियों को लानत- मलामत की।

आप अपने कर्मचारियों के साथ इस तरह का सलूक नहीं कर सकते! आपका रवैया तो यह है कि हर बात में मनमानी करते रहें।

इस घटना का नतीजा यह निकला कि प्रेमचंद और उनके साथी दोनों की नौकरियां जाती रहीं। प्रेमचंद बनारस लौट आये और क्वीन्स कॉलेज के प्रिंसिपल मि. बेकन से मिले।

मुझे अफसोस है, तुम्हारी नौकरी जा चुकी है पर मैं शिक्षा-विभाग के अपने कुछ दोस्तों से तुम्हारे बारे में बात करूंगा।

मि. बेकन ने पूर्वी यू. पी. के बहराइच नगर के एक सरकारी स्कूल में उन्हें अध्यापक की जगह दिलवा दी।

बहराइच बहुत पिछड़ा हुआ प्रदेश है। वहाँ का जीवन बहुत कठिन होगा। पर और कोई चारा भी तो नहीं!

कोई तीन ही महीने के बाद उनका तबादला प्रतापगढ़ को हो गया। यह जगह बनारस से पास थी। यहाँ उनके ऊपर आर्यसमाज का प्रभाव पड़ा।

बाल विवाह, दहेज-प्रथा और ऊँच-नीच के भेद-भाव जैसी अनेक कुरीतियाँ हिंदु समाज में घर कर गई हैं। इन सबको जड़ से उखाड़ फेंकने की हमें कोशिश करनी चाहिए।

भारत की समृद्ध परंपरा की जानकारी के लिए उन्होंने इतिहास-ग्रंथ पढ़े। बाद में जब उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों की रचना की तब उनका यह अध्ययन बहुत काम आया।

1905 में उनकी तैनाती कानपुर में हुई। यहाँ "ज़माना" के संपादक मुंशी दयानारायण निगम से उनका निकट संपर्क हुआ।

'ज़माना' में गोरखले पर आपका जो लेख छपा था, हमारे पाठकों ने उसे बहुत पसंद किया है।

'ज़माना' में उनके लेख और कहानियाँ नियमित रूप से छपने लगीं। निगम की मार्फ़ा उनका कानपुर के और कई लेखकों से संपर्क हुआ।

'बंगभंग' करने में लार्ड कर्ज़न का असली उद्देश्य है मुसलमानों को अलग हटाकर राष्ट्रवादी शक्तियों को कमज़ोर करना। असल में वह बड़ी चालाकी से 'फूट डालो और शासन करो' का खेल खेल रहा है।

प्रेमचंद का निजी जीवन सुखमय न था परंतु फिर भी वे अपने अट्टहास के लिए प्रसिद्ध थे। वे खुलकर हँसते थे कानपुर में उन्होंने और उनके कुछ दोस्तों ने एक 'हँसी-क्लब' बना रखा था।

1906 में प्रेमचंद ने दूसरा विवाह कर लिया। उनकी दूसरी पत्नी शिवरानी बाल-विधवा थीं

मेरे जीवन का यह एक नया अध्याय है। मुझे उम्मीद है हम दोनों सुखी जीवन बितायेंगे।

मुझे भी यही उम्मीद है।

कुछ महीने बाद—

तुम्हें यह जानकर खुशी होगी कि मुझे तरक्की देकर 'सब-डिप्टी इंस्पेक्टर ऑफ़ स्कूल्स' बना दिया गया है और मेरा तबादिला महोबा, ज़िला- हमीरपुर के लिए हो गया है।

पर कानपुर हमें सदा याद आयेगा।

अपनी नई जगह पर उन्हें कई-कई दिन तक दौरे पर रहना पड़ता था। चूँकि उनकी पत्नी अकेली नहीं रह सकती थीं, अतः उन्होंने तय किया कि अपने मुआयने के दौरों पर इन्हें भी साथ ले जाया करेंगे। इसी ख्याल से उन्होंने एक बैलगाड़ी* ख़रीद ली

* सरकार उन्हें बीस रुपया महीना सवारी-भत्ता दिया करती थी।

दौरों पर प्रेमचंद को तरह-तरह के भेंट उपहार दिये जाते।

मैं ये चीज़ें नहीं ले सकता। मैं जो काम कर रहा हूँ, सरकार मुझे उसकी तनख़्वाह देती है।

** उनकी पहली पत्नी का देहांत 1904 में हो गया था।

१९०९ में 'सोज़ेवतन' नाम से एक कहानी-संग्रह निकला। इसके लेखक थे नवाब राय। जल्दी ही पता चल गया कि ये नवाबराय कौन हैं। डिस्ट्रिक्ट कलेक्टर ने प्रेमचंद को बुला भेजा।
यह किताब तुमने लिखी है?
जी हाँ, मैं ही इन कहानियों का लेखक हूँ।
यह राजद्रोह है, और कुछ नहीं! मुगलशासन होता तो तुम्हारे हाथ काट डाले गये होते। आइंदा बिना पहले से अनुमति लिये तुम कुछ नहीं छापोगे।
इस किताब पर प्रतिबंध लगा दिया गया। और पुलिस के हाथ जितनी प्रतियाँ लगीं, सब जला दी गईं।
फिर उन्होंने अपना साहित्यिक नाम 'प्रेमचंद'* रख लिया और भरसक खुलकर लिखते रहे।
सरकार मेरी कलम पर प्रतिबंध नहीं लगा सकती!
* प्रेमचंद नाम से सबसे पहले उनकी जो रचना छपी वह थी उनकी कहानी 'बड़े घर की बेटी'। यह कहानी दिसंबर १९१० के 'ज़माना' में छपी थी।
इस घटना का असर यह हुआ कि वे मन ही मन सरकार के खिलाफ़ हो गये।
सरकारी नौकरी आदमी को कितना नीचा गिरा देती है। मेरा मन करता है नौकरी से इस्तीफ़ा दे दूँ!

उन्होंने सोचा- क्यों न पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश करूं। इस बारे में उन्होंने अपने दोस्त निगम से लिखा-पढ़ी की।

इस लिखा पढ़ी का कुछ असर नहीं निकला और वे सरकारी नौकरी करते रहे। बराबर दौरे करते रहने का असर उनकी सेहत पर पड़ा। 1916 में उनका तबादिला एक अध्यापक के रूप में गोरखपुर के लिए कर दिया गया। जिस दिन वे गोरखपुर पहुंचे, ठीक उसी दिन उनके पहले पुत्र श्रीपत का जन्म हुआ*।

एक दिन उन्हें प्रधानाध्यापक ने बुलाया—

उनका घर शिक्षा विभाग के एक बड़े अफ़सर के बंगले के पास था। एक बार—

एक दिन प्रेमचंद की गाय भटकती हुई कलेक्टर के बगीचे में घुस गई—

पहले तो प्रेमचंद माफी मांगते रहे किंतु जब कलेक्टर का गुस्सा किसी तरह शांत ही नहीं हुआ तो प्रेमचंद को भी गुस्सा चढ़ आया।

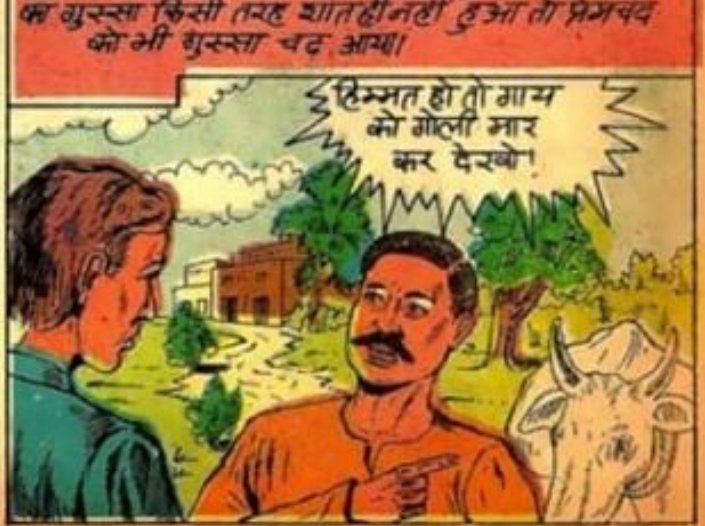

* उनकी पुत्री कमला का जन्म 1913 में हुआ और इसके पूर्व अमृत का 1912 में।

1920 में गांधीजी गोरखपुर आये और उन्होंने एक आम सभा मे भाषण दिया। प्रेमचंद बीमार थे पर फिर भी वे अपनी पत्नी और दोनों बच्चों सहित सभा में गये।

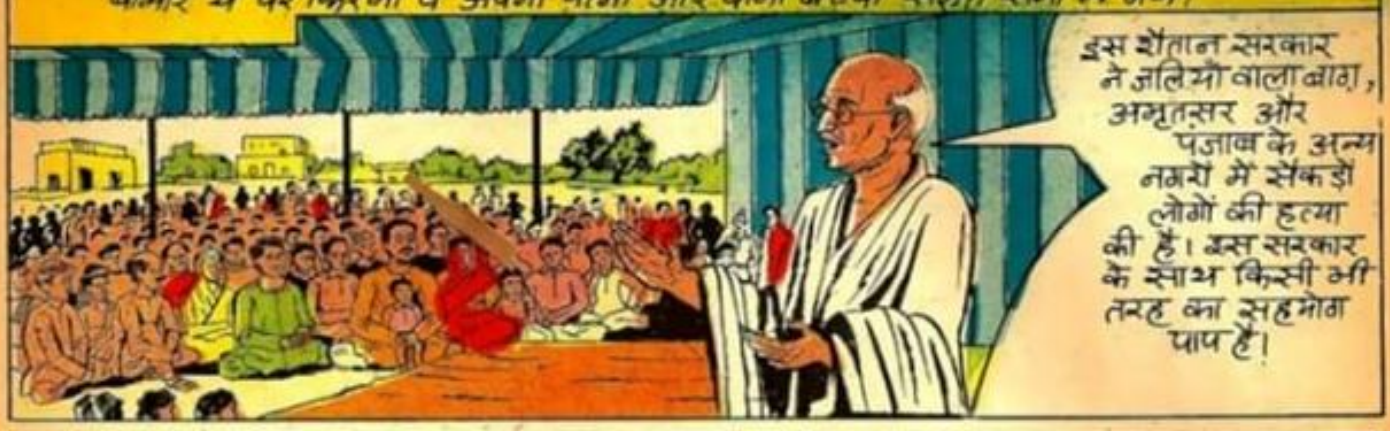

सभा से लौटे तो प्रेमचंद एकदम बदल चुके थे।

प्रेमचंद ने अपना इस्तीफ़ा प्रधानाध्यापक को दे दिया।

उनका इस्तीफ़ा मंज़ूर कर लिया गया।

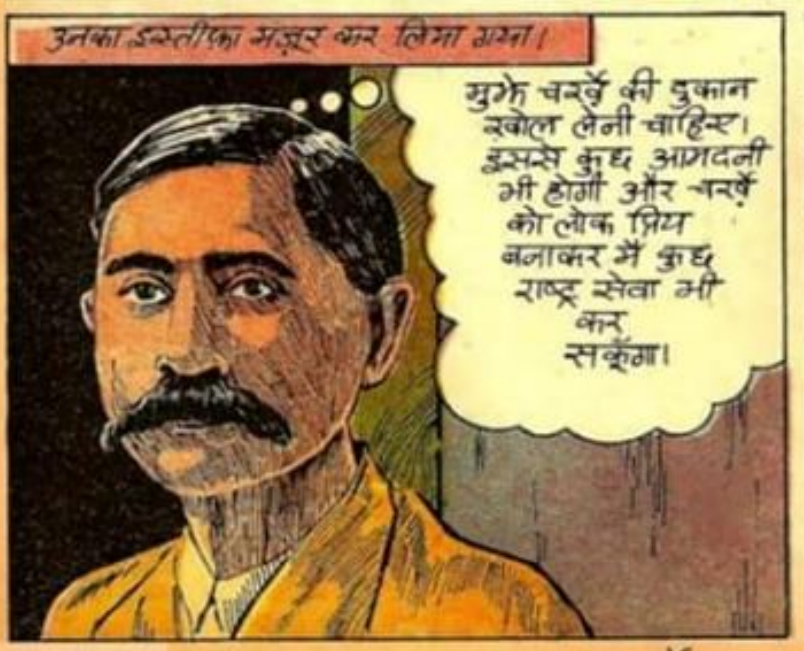

उन्होंने गोरखपुर में चरखे की एक दुकान खोल ली।

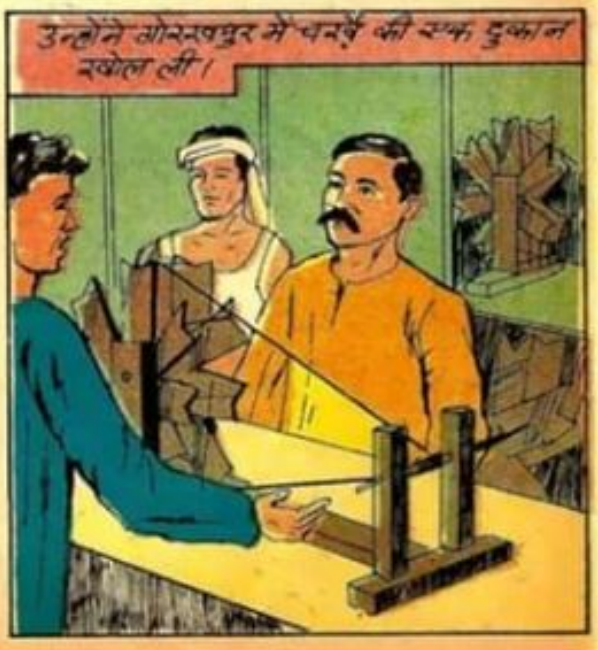

इस काम में उन्हें सफलता नहीं मिली। दुकान एक ही महीने में बंद कर देनी पड़ी। फिर उन्होंने अपने मित्र निगम को पत्र लिखा —
....मुझे सलाह दो कि अब मुझे क्या करना चाहिए। अगर तुम्हारे साथ साझे में छापाखाना खोला जा सके तो मैं कुछ पूंजी जुटा सकता हूं।....
यह प्रस्ताव कार्य-रूप में परिणत नहीं हो सका परन्तु निगम और गणेशशंकर विद्यार्थी की मदद से उन्हें कानपुर में मारवाड़ी स्कूल के प्रधानाध्यापक का पद मिल गया। स्कूल का मैनेजर यों ही उनके ऊपर धौंस जमाता रहता था।
तुम बिल्कुल बेकार के आदमी हो। स्कूल में कहीं कुछ अनुशासन ही नहीं है।
मैनेजर का रवैया दिन-ब-दिन असह्य होता चला गया। उन्होंने नौकरी छोड़ देने का निश्चय कर लिया।
अफवाहें उड़ रही हैं कि आप स्कूल छोड़ रहे हैं। आप हमें छोड़ कर न जाइए!
मैनेजर का ख़याल है कि मेरा कोई व्यक्तित्व नहीं और मैं स्कूल में अनुशासन नहीं रख सकता।
यह नौकरी भी चली गई। फिर वे बनारस से निकलने वाले एक नये मासिक पत्र 'मर्यादा' के संपादक बने
इस बीच लेखक के रूप में उनकी शोहरत चारों ओर फैल गई थी। समाज के लगभग हर वर्ग में — नर्तकियों तक में — उनके पाठक-पाठिकाएं थीं।

उन्होंने बहुत थोड़े अरसे 'मर्यादा' का संपादन किया। फिर काशी विद्यापीठ में अध्यापक बन गये।

यहाँ के अधिकारियों के साथ भी निभाव होना मुश्किल है। आमदनी का कोई स्वतंत्र ज़रिया होना चाहिए।

उन्होंने 'सरस्वती प्रेस' के नाम से एक छापाखाना लगाया।

सरस्वती प्रेस

प्रेमचंद इतने सीधे-सादे थे कि व्यापार उनके बस की बात न थी। प्रेस उनके लिए बहुत बड़ा सिरदर्द बन गया। अपने सौतेले भाई महताबराय को एक चिट्ठी में उन्होंने लिखा —

मैं तो इसके बोझ से कुचला जा रहा हूँ। पता नहीं बाकी ज़िंदगी कैसे कटेगी।

फिर उन्हें नौकरी की तलाश में जुट जाना पड़ा। इस बार वे लखनऊ से प्रकाशित 'माधुरी' पत्रिका के संपादक बन गये।

कठिन परिस्थितियों से जूझते हुए भी उन्होंने इस बीच बहुत-सारी कहानियाँ और कुछ उपन्यास लिख डाले।

गबन

कायाकल्प

रंगभूमि

निर्मला

प्रेमचंद

जब प्रेमचंद लखनऊ में थे तभी उन्होंने बनारस से 'हंस' नाम से एक मासिक पत्रिका निकाली। यह गांधीजी के नमक सत्याग्रह के साल (१९३०) की बात है। उन्होंने लिखा—

HANS

हिंदुस्तान ने एक अहिंसात्मक युद्ध का बिगुल बजा दिया है। 'हंस' भी इसमें भरसक अपना योग देगा।

उन्होंने सत्याग्रह आंदोलन में शामिल होने का फैसला किया।

आपको गिरफ़्तारी नहीं देनी चाहिए। आपकी सेहत कितनी खराब है। फिर आपकी गैरमौजूदगी में हमारी रोटी कैसे चलेगी?

हमारे सारे नेता गिरफ़्तार हो चुके हैं। मुझे शर्म आती है कि मैं जेल के बाहर हूँ।

मैं सत्याग्रह करूँगी। हिंदुस्तान की आज़ादी की लड़ाई में यह हमारे परिवार का योगदान होगा।

विदेशी कपड़े की एक दुकान पर धरना देने के अपराध में शिवरानी को गिरफ्तार कर लिया गया।

१९३२ में प्रेमचंद ने 'आधुरी' छोड़ दी और वे बनारस लौट आये।

अब मैं एक साप्ताहिक पत्र शुरू करना चाह रहा हूँ।

तुम्हारा प्रेस और 'हंस' भारी घाटे में चल रहे हैं। 'साप्ताहिक' निकालना निहायत बेवकूफ़ी होगी।

बेवकूफ़ियां तो मैं हमेशा ही करता आया हूँ। सरकार पर प्रहार करने के लिए मेरे हाथ में एक साप्ताहिक पत्र होना ही चाहिए।

दोस्तों की सलाह सुनी-अनसुनी करके प्रेमचंद ने 'अरगण' निकाला। उनका यह साप्ताहिक चला नहीं। उनकी आर्थिक चिंताएँ और भी बढ़ गईं।

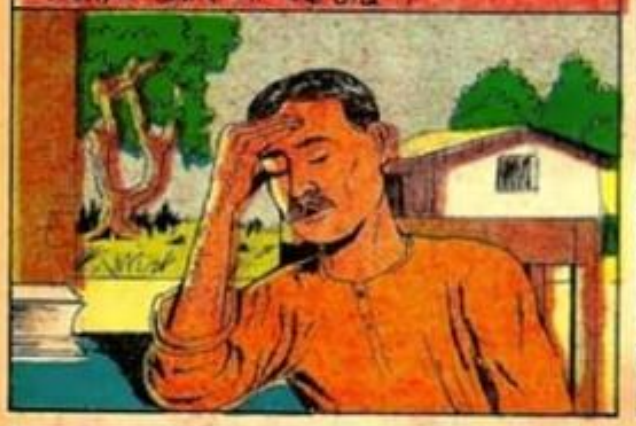

(1934) प्रेस और पत्रों का घाटा पूरा करने के लिए प्रेमचंद फ़िल्मी कहानी-लेखक के रूप में बंबई गये।

बंबई में उनकी ज़िंदगी उदास और घुटन की ज़िंदगी थी।

इस फ़िल्मी दुनिया में मैं बिल्कुल अजनबी हूँ। यहाँ अश्लीलता को मनोरंजन का नाम दिया जाता है। मुझे अपना बोरिया-बिस्तर बाँध लेना होगा...

1935 में वे बनारस लौटे तो उनकी सेहत चकनाचूर हो चुकी थी। पर उन्हें आराम नसीब न था। वे तुरत अपना प्रसिद्ध उपन्यास 'गोदान' पूरा करने में जुट पड़े – यह उपन्यास जून 1936 में निकला।

"गोदान" छपने के पंद्रह दिन बाद की बात है कि एक दिन उन्हें खून की उल्टी हुई। उन्हें 'जिगर का सिरोसिस' रोग हो गया था। उस समय वे अपना नया उपन्यास 'मंगलसूत्र' लिखने में लगे थे।

8 अक्तूबर 1936 को प्रेमचंद का निधन हो गया। उनकी शवयात्रा में मुश्किल से बारह लोग शामिल हुए। जैसी दीनता में उनके जीवन का आरंभ हुआ था वैसी ही दीनता में अंत हुआ।